**ओ३म्**

**“ईश्वर और वेद का मनुष्य जीवन में महत्व”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य को मनुष्य जीवन ईश्वर से मिला वरदान है। ईश्वर और जीवात्मायें संसार में अनादि काल से विद्यमान हैं। इसी कारण से ईश्वर ने अनादि कारण जड़ पदार्थ मूल प्रकृति से इस सृष्टि को जीवात्माओं के सुख के लिए रचा है। मनुष्य व अन्य प्राणियों को जो दुःख प्राप्त होते हैं वह अधिकांश उनके पूर्व कृत कर्मों के कारण होते हैं या फिर अन्य प्राणियों के अन्याय व अन्य पश्वादि व प्राकृतिक आपदाओं से हुआ करते हैं। **मनुष्य जीवन सुख भोग के साथ सभी सांसारिक दुःखों से मुक्ति का द्वार भी है।** यदि हम मनुष्य जीवन में ईश्वर प्रदत्त वेदों के ज्ञान को जान लें और उसके अनुसार ही आचरण करें, तो सम्भावना कर सकते हैं कि हम धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त कर लें। यदि पूर्व कर्म फल भोग बचे रहे या फिर हमारी साधना में कमी रही तो मोक्ष भावी जन्मों में प्राप्त हो सकता है। मोक्ष कभी भी हो, अनेक जन्म भले ही लग जायें, परन्तु हमें मोक्ष के साधनों ईश्वरोपासन, देवयज्ञ व अन्य महायज्ञों सहित वेदाचरण को करते ही रहना चाहिये क्योंकि वेदाचरण से श्रेष्ठ कार्य मनुष्य जीवन में कुछ भी नहीं है। संसार के आदि काल से महाभारतकाल तक व उसके बाद हुए जैमिनी और दयानन्द आदि ऋषि सभी वेदाचरण करते हुए जीवन व्यतीत करते आये हैं। इससे अधिक श्रेयस्कर कार्य किसी भी मनुष्य के लिए और कुछ नहीं हो सकता। यदि कोई वेदाचरण नहीं करता तो वह अपने परजन्मों वा भावी जन्मों को बिगाड़ता है जिसका परिणाम भावी जन्मों में उसे दुःख मिलना निश्चित होता है।

ईश्वर हमारा माता, पिता, आचार्य, गुरु, राजा व न्यायाधीश है। आर्यसमाज के दूसरे नियम में वेदों के आधार पर निष्कर्ष रूप में ईश्वर के गुणों को बताते हुए कहा गया है कि **‘ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी चाहिये।’** इन गुणों के अतिरिक्त ईश्वर जीवों के जन्म-जन्मान्तरों में किये गये अभुक्त पाप-पुण्य कर्मों का फल प्रदाता भी है। वह सृष्टि को बनाने के साथ इसका पालन व यथासमय संहार भी करता है। संसार में हम अनेकानेक योनियों में जीवात्माओं के भिन्न भिन्न प्रकार के शरीर देखते हैं। इन्हें उन जीवों के कर्मानुसार ईश्वर ने ही बनाया है। **ईश्वर सर्वव्यापक होने व जीव व्याप्य होने के कारण ईश्वर व जीव का व्यापक-व्याप्य संबंध है।** इस व्याप्य-व्यापक संबंध से ही जीवात्मा वा मनुष्य ईश्वर की उपासना व संगति करके अपने दुर्गुणों, दुव्यर्सनों व दुःखों का त्याग कर सुखी व आनन्दित होता है और वेदविहित कर्मों को करके असत् व अशुभ कर्मों को न करके पापरहित होकर मुक्त होता है। हमारा अस्तित्व व सुख-दुख ईश्वर की कृपा व न्याय पर निर्भर है। इसका अर्थ यह है कि ईश्वर धर्म का यथार्थ स्वरूप होने के कारण हमें न्यायपूर्वक हमारे कर्मानुसार सुख आदि देता है जिससे हम कर्मानुसार अनेक योनियों में जन्म पाकर अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत कर पाते हैं। **यह भी बता दें कि सबसे अधिक सुख मनुष्यों को वेद ज्ञान की प्राप्ति व उसके अनुसार सदाचरण कर ही प्राप्त होता है। सद्ज्ञान मनुष्यों को सुख व आनन्द का देने वाला है। अतः सभी मनुष्यों को वेदाध्ययन व वैदिक ग्रन्थों यथा सत्यार्थप्रकाश आदि के स्वाध्याय में अपना यथोचित समय लगाना चाहिये।** यहां यह भी निवेदन कर दें कि अधिक से अधिक ऋषियों व शीर्ष वेद विद्वानों के ग्रन्थों को ही पढ़ना चाहिये। साधारण कोटि के लेखकों के ग्रन्थों को पढ़ने से अविद्या साथ लग जाने का भय रहता है। स्वामी दयानन्द जी के विद्यागुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती स्वयं को ऋषि नहीं मानते थे। इसलिए वेदों के अच्छे विद्वान होकर भी उन्होंने ग्रन्थों की रचना इसी कारण नहीं की कि वह अनृषि विद्वानों के ग्रन्थों के अध्ययन के विरुद्ध थे।

वेद किसी मनुष्य व ऋषि की रचना नहीं है अपितु यह सृष्टि की आदि में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न चार ऋषियों को ईश्वर से प्रदत्त सभी सत्य विद्याओं का ज्ञान है। वेद ऐसा ज्ञान है कि जिसको जानने व आचरण करने से मनुष्य धार्मिक होकर अर्थ व काम सहित मुक्ति की प्राप्ति भी करता है। महाभारतकाल के बाद वेद व वेदों का ज्ञान व उसके यथार्थ अर्थ विलुप्त हो गये थे और इसके स्थान पर देश व समाज में अविद्यायुक्त वेद विरुद्ध अर्थों का प्रचार हो गया था। सायण एवं महीधर आदि वेदभाष्यकारों के वेदार्थ मिथ्या व अधिकांशतः वेदों के विपरीत अर्थों से युक्त हैं। ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी में गुजरात के टंकारा कस्बे में ऋषि दयानन्द जी का जन्म होता है। वह अपनी विद्या की तीव्र इच्छा व तदनुकूल घोर तप व पुरुषार्थ से वेद व उनके सत्यार्थ को प्राप्त कर सके। वेदों को प्राप्त कर उन्होंने उनके सत्यार्थ को ऋषियों के ग्रन्थ व्याकरण एवं निरुक्त आदि व अपने योगबल से जाना और गुरु आज्ञा से उसका देश में प्रचार किया। उन्होंने पहले सत्यार्थप्रकाश लिखा था। यह भी वैदिक साहित्य का प्रमुख ग्रन्थ है। इसके बाद उन्होंने चारों वेदों की भूमिका **‘ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका’** लिखी जिसमें उन्होंने चारों वेदों में किन विषयों का किस प्रकार का ज्ञान है, उसका संक्षेप में प्रकाश किया है। इस ग्रन्थ की रचना के बाद स्वामी दयानन्द जी ने ऋग्वेद और यजुर्वेद का भाष्य आरम्भ किया। यजुर्वेद का भाष्य पूरा हो गया तथा ऋग्वेद का भाष्य जारी था। इसी बीच 30 अक्तूबर, 1883 को एक षडयन्त्र का शिकार होकर विष दिये जाने से उनका देहान्त हो गया। उनके बाद उनके अनेक शिष्यों ने बहुत योग्यतापूर्वक उनकी शैली पर अविशिष्ट वेद व वेदमंत्रों के अर्थ व भाष्य किये। आज चारों वेदों के अनेक विद्वानों के भाष्य व टीकायें उपलब्ध है जिन्हें देखकर अनुमान होता है कि शायद इससे पूर्व कालों में जनसामन्य को वेदों के अर्थ इतनी सुविधाओं के साथ प्राप्त नहीं थे। आज आर्यसमाज में ऐसे अनेक व्यक्ति हैं जिन्होंने चारों वेदों का स्वाध्याय करने के साथ चतुर्वेदपारायण यज्ञों का अनुष्ठान भी किया है। यह सब ईश्वर और ऋषि दयानन्द की कृपा का परिणाम है।

ईश्वर प्रदत्त चार वेद आज सरलता से उपलब्ध हैं। जो मनुष्य इसका अध्ययन करते हैं, वेदों की शिक्षाओं के अनुसार आचरण करते हैं, वह सच्चे अर्थों में मनुष्य हैं। हम अनुभव करते हैं कि यदि वेद नहीं रहेंगे तो मनुष्य भी आकृति से भले ही मनुष्य होगा परन्तु उसमें जिस ज्ञान व कर्मों की अपेक्षा है, उसके न होने से वह मनुष्य नहीं रहेगा। वेद की विलुप्ति की बात करते हैं तो इसका अर्थ होता है कि वेद मन्त्रों की संहितायें अनुपलब्ध हो जाये परन्तु ऐसा यदि कालान्तर में होगा, तो भी वेदों के ईश्वर के ज्ञान में विद्यमान रहने से वह कभी सर्वथा विलुप्त नहीं होते। ऐसा होगा नहीं और ईश्वर करे कि इस संसार में कभी ऐसा समय न आये। यह बात हम इस लिए कह रहे हैं कि आज वेदों के अध्ययन की प्रवृत्ति बढ़ने के स्थान पर कम हो रही है। आज वेद विरुद्ध शक्तियां देश व विश्व में सर्वत्र प्रबल हैं। वह वैदिकों का धर्मान्तरण कर उन्हें विधर्मी बनाना चाहती हैं और वेदों के प्रति उनमें श्रद्धा जैसी कोई बात नहीं है। यह ज्ञातव्य है कि परमात्मा वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में केवल एक बार ही देता है। यदि हमारे आलस्य प्रमाद से यह कभी पूर्ण रूप से विलुप्त होंगे तो फिर इस सृष्टि कल्प के शेष भाग में मनुष्य वेद ज्ञान से वंचित ही रहेंगे। हमें विचार कर ऐसी स्थिति नहीं आने देनी है। वेदों के विषय में यह भी जानने योग्य है कि संसार में जितनी भी विद्याओं का विकास व उन्नति हुई है उसका आदि कारण ईश्वर और वेद ही हैं। आर्यसमाज का प्रथम नियम इस बात को इस रूप में कहता है **‘सब सत्य विद्या (वेद व परवर्ती ऋषियों, विद्वानों व वैज्ञानिकों के ग्रन्थ) और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उनका आदि मूल परमेश्वर है।’** वेदों में परा व अपरा विद्या अर्थात् आध्यात्मिक और भौतिक सभी विद्यायें आवश्यक मात्रा व सूत्र रूप में विद्यमान हैं। ईश्वर के विषय में वेद विस्तार से चर्चा करते हैं। चारों वेदों में ईश्वर विषयक मन्त्र व ज्ञान उपलब्घ है। हमारे ऋषियों ने आज्ञा देते हुए कहा है कि **‘स्वाध्यायान्मा प्रमदः’** अर्थात् हम वेद ज्ञान के अध्ययन में कभी प्रमाद न करें। आर्यसमाज व इसके अनुयायियों को स्वयं भी वेदों का अध्ययन करना है और इसके साथ वेदों का प्रचार भी करना है। हमारे शरीर में प्राण, मन, बुद्धि सहित पूरे शरीर का जितना महत्व है उसी प्रकार से मनुष्य जीवन में ईश्वर व वेद दोनों का महत्व है। यदि मनुष्य के जीवन में ईश्वर की सच्ची उपासना व वेदों का ज्ञान नहीं है तो वह जीवन अपूर्ण है। ईश्वर व वेदों के यथार्थ ज्ञान व इनकी उपासना से ही मनुष्य श्रेष्ठ मनुष्य बन सकता है। ईश्वर व वेद ज्ञान के बिना हम एक सच्चे सदाचारी मनुष्य की कल्पना नहीं कर सकते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**